International Journal of Sanskrit Research 2023; 9(3): 43-46

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2023; 9(3): 43-46
© 2023 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 12-03-2023
Accepted: 16-04-2023

जितेन्द्र शुक्ला
शोधार्थी, हिन्दी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, भारत

Corresponding Author:
जितेन्द्र शुक्ला
शोधार्थी, हिन्दी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, भारत

सूर के काव्य में नगरीय जीवन का अध्ययन

जितेन्द्र शुक्ला

सारांश
कृष्ण काव्य परंपरा में सूर के काव्य में नगरीय व ग्रामीण जीवन का चित्रण हमें पूर्ण रूप से दिखाई देता है। सूर का जन्म नगर में हुआ लेकिन साहित्यिक यात्रा के माध्यम से सूर ने ग्रामीण जीवन को जिया। भक्ति के शिरोमणि कवि सूरदास जी ने कृष्ण भक्ति का वर्णन करते हुए वहाँ की आर्थिक, सामाजिक व ग्रामीण जीवन का सविस्तार वर्णन किया हैं। सूर ने अपने काव्य में ग्रामीण और नगरीय जीवन का वर्णन किया हैं।

कूटशब्द : कृष्ण, काव्य परंपरा, सूरदास, नगरीय जीवन

प्रस्तावना
भारत में कृष्ण काव्य परम्परा के शुरूआत की कोई निश्चित जानकारी नहीं है। मध्ययुग के भक्ति–आन्दोलन से कृष्ण भक्ति काव्य का विधिवत विकास हुआ, लेकिन इसकी पृष्ठभूमि उससे पूर्व की है, जहाँ से इस काव्य को आधार मिलता है। कृष्ण भक्ति शाखा का विकास सम्पूर्ण भारत में हुआ। भक्ति काव्य में भक्ति आंदोलन की यह धारा दक्षिण से आरम्भ होकर उत्तर और फिर पूर्व एवं पश्चिम तक फैल गयी। वर्तमान समय में कृष्ण भक्ति शाखा के विस्तार और प्रसिद्धि का यही प्रमाण है कि भारत ही नहीं, विश्व के कई देशों में इस काव्य परम्परा के साहित्य को बड़े चाव से पढ़ा और सुना जाता है। कृष्ण अब भारत के ही नहीं, विश्वभर के साहित्य के नायक है, जिनको केन्द्रित कर विश्व की विविध भाषा में काव्य सृजन हुआ है। आचार्य शुक्ल के अनुसार – ''श्री कृष्ण ही परब्रह्म है जो दिव्य गुणों से सम्पन्न होकर 'पुरुषोत्तम' कहलाते हैं। आनन्द का पूर्ण अविर्भाव इसी पुरुषोत्तम रूप में रहता है, अतः यही श्रेष्ठ रूप है।''
कृष्ण भक्ति का विकास भले ही भक्ति–आंदोलन के बाद हुआ, पर उसका आरम्भ पहले ही हो चुका था। वैदिक साहित्य में कृष्ण का उल्लेख ऋग्वेद में मिलता है। कृष्ण की चर्चा छन्दोग्य उपनिषद् में भी दिखती है। बौद्धों की जातक कथा में इसका उल्लेख मिलता है। जैनों के यहाँ कृष्ण उनके तीर्थकरों के समय विद्यमान है। पाणिनी के अष्ठाध्यायी में 'वासुदेवार्णुनाभ्यावुन' सूत्र में वासुदेव (कृष्ण) नाम का उल्लेख मिलता है। वासुदेव को कालान्तर में कृष्ण ही माना गया है। आगे चलकर भागवत् कथा एवं महाभारत में कृष्ण का स्वरूव विकसित हुआ है। महाभारत काल में वासुदेव, विष्णु, राजनीतिज्ञ, योगी, लीला पुरुष–कृष्ण में रूपान्तरित हो गया। कृष्ण के चरित्र में प्रतिष्ठा में सर्वाधिक योगदान 'श्रीमद्भागवत पुराण' का रहा है।
भक्ति काव्य का आरम्भ निर्गुण सन्त–काव्य से होता है, जिसका प्रसार सगुण भक्ति में हुआ। जनपदीय भाषाओं में जब राम और कृष्ण भक्त कवियों ने इनके चरित्र को काव्य में सृजित किया, तो जीवन में नये उत्सव और उल्लास का स्वर संचरित हुआ। कृष्ण भक्ति काव्य का प्रसार तो इसमें सबसे अधिक व्यापक और सृजनशील है। दार्शनिक आधार की वैचारिकी पाकर भक्ति–काव्य की कविताई अधिक विकसित हुई।
बल्लभाचार्य के शुद्धाद्वैतवाद ने कृष्ण भक्ति–काव्य को वैचारिकी आधार प्रदान किया। शद्धाद्वैतवाद के आधार पर उन्होंने कृष्ण भक्ति के विकास के लिए जिस वैज्ञानिक भक्ति–मार्ग का विकास किया, उसे 'पुष्टिमार्ग' कहते हैं। वल्लाभाचार्य ने भक्ति के इस मार्ग की दार्शनिक और भक्तिपरक विवेचना की। उन्होंने कृष्ण भक्त कवियों को इसमें दीक्षित कर कृष्ण भक्ति काव्य धारा के मार्ग को प्रशस्त किया।
इन कवियों में सबसे विशिष्ट स्वर सूरदास का है। बल्लभाचार्य ने शद्धाद्वैतवाद में ब्रह्म और जीव में अन्तर स्पष्ट करते हुए ब्रह्म को सत्, चित् और आनन्द रूप में दिखाया है। ब्रह्म अपने इन तीनों स्वरूपों का अविर्भाव और तिरोभाव करता रहता है। शुद्धाद्वैतवाद का यह दर्शन भक्ति के क्षेत्र में (पुष्टिमार्ग) कहलाता है। पुष्टि मार्ग का स्रोत 'श्रीमद्भागवद्पुराण' है।

इन कवियों में सबसे विशिष्ट स्वर सूरदास का है। बल्लभाचार्य ने शद्धाद्वैतवाद में ब्रह्म और जीव में अन्तर स्पष्ट करते हुए ब्रह्म को सत्, चित् और आनन्द रूप में दिखाया है। ब्रह्म अपने इन तीनों स्वरूपों का अविर्भाव और तिरोभाव करता रहता है। शुद्धाद्वैतवाद का यह दर्शन भक्ति के क्षेत्र में (पुष्टिमार्ग) कहलाता है। पुष्टि मार्ग का स्रोत 'श्रीमद्भागवद्पुराण' है।

बल्लभाचार्य के पुत्र गोसाई विट्ठलनाथ ने अपने पिता के चार शिष्यों सूरदास, परमानन्ददास, कुम्भनदाास और कृष्णदास तथा अपने चार शिष्यों छीत स्वामी, गोविन्द स्वामी, चतुर्भुजदास और नंददास को लेकर अष्टछाप का विकास किया। आठ कवि होने के कारण नाम अष्ठछाप रखा। ये आठों कवि सख्य–भाव से अनुरक्त होकर उनका कीर्तन और गायन करते थे। भक्ति, कविता और संगीत तीनों के मेल से सूरदास का गायन सबसे अधिक सृजनशील है। सूरदास का सूरसागर कृष्ण भक्ति धारा का अनुपम ग्रन्थ है।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने अपने इतिहास ग्रन्थ में भी लिखा है – ''बल्लभाचार्य की आज्ञा से सूरदास ने श्रीमद्भागवत् की कथा को पदों में गाया। .... कृष्ण–जन्म से लेकर मथुरा जाने तक की कथा अत्यन्त विस्तार से फुटकल पदों में गाई गई है। भिन्न–भिन्न लीलाओं के प्रसंग को लेकर इस सच्चे रसमग्न कवि ने अत्यन्त मधुर और मनोहर पदों की झड़ी सी बांध दी है। यह रचना इतनी प्रगल्भ और काव्यपूर्ण है कि आगे होने वाले कवियों की श्रृंगार और वात्सल्य की उक्तियाँ सूर की जूठी–सी जान पड़ती है। अतः सूरसागर किसी चली आती हुई गीत काव्य–परम्परा का, चाहे वह मौखिक ही रही हो, पूर्ण विकास सा प्रतीत होती है।''

सूरदास मध्यकालीन काव्यधारा के एक विशिष्ट काव्यधारा कृष्ण–काव्यधारा उसके प्रवर्तक हैं। कृष्ण–काव्यधारा के अष्टछापी कवि जो पुष्टिमार्गी भक्ति के अनुयायी और प्रवर्तक कवि है। कृष्ण भक्ति काव्य के माध्यम से सूरदास ने हिन्दी कविता और भारतीय कविता में कुछ ऐसे मानक स्थापित किये, कुछ ऐसे उदाहरण प्रस्तुत किये जो वस्तुतः यह कहा जा सकता है कि 'न भूतो न भविष्यतिः।' जो उससे पहले कही दिखाई देते नहीं और बाद में होंगे की नहीं इसकी सम्भावना नहीं है या प्रतीत नहीं होती क्योंकि सूर के पास वह हृदय था जो भक्तिपरक था ही साथ–साथ तमाम अन्य प्रवृत्तियों की परख करने की क्षमता और कुशलता सूरदास के पास थी।

मध्यकाल की वो समस्त महत्वपूर्ण प्रवृत्तियाँ जिनकों हम प्रेम के रूप में, श्रृंगार के रूप में, भक्ति के रूप में, वात्सल्य भावना के रूप में, विरहानुभूति के रूप में, अभिव्यक्ति के रूप में ये तमाम वो पक्ष है जो मध्यकालीन कविता की एक पहचान हमारे सामने उजागर करते हैं। सूरदास की दृष्टि बहुत व्यापक है, ऐसा कहा जाता है कि सूर जन्मांध थे लेकिन ये विश्वास नहीं होता, उनकी कविता को पढ़ने के बाद उनकी कविता में उपलब्ध सौन्दर्य अनुभूतियों को इस तरह से जिस बारीकी के साथ अभिव्यक्त किया गया उसको समझकर आत्मसात करके यह लगता नहीं कि वो जन्मांध थे उन्होंने रंगों की परख अपनी कविताओं में, पदों में बहुत ही प्रामाणिकता के साथ की है। पुष्पों के रंग की सूरदास को ज्ञात हैं, कोयल और कौआ का रंग भी सूरदास को ज्ञात है इन सबका जब वो उल्लेख करते हैं और यहाँ तक कि कृष्ण पीताम्बर हैं, इन्द्रधनुष का रंग क्या है इन सबकी चर्चा वो अपनी कविता में करते हैं। सूरदास वास्तव में एक बड़े व्यापक हृदय के साथ कविता को हमारे समक्ष रखते हैं। ऐसे कृष्ण भक्ति काव्यधारा जो सगुण काव्यधारा की एक प्रमुख काव्यधारा है उसका प्रर्वतन करने वाले महाकवि सूरदास जिनकी एक ही रचना सूरसागर एक बहुत वृहत रचना हैं। सूरसागर में भ्रमर गीत प्रसंग भी हैं। सूरसागर के आधार पर ब्रज भाषा, ब्रज प्रदेश के वो कवि है, की तरह अभिव्यक्ति कौशल और किसी कवि की नहीं हैं। जो सूर के निकट पहुँचे।

सूर में वो समस्त विशेषताएँ और अभिव्यक्त कौशल की कलात्मकता हैं। जो अन्य कवियों में बहुत कम दिखाई देती हैं। लेकिन सूरदास ने उन समस्त कलात्मक सौन्दर्य पर विशिष्ट आयामों को अपने कविता में शामिल किया हैं। इस दृष्टि से यह जो कवि है, इनको पाठ्यक्रमों में निर्धारित करने का मुख्य प्रयोजन भी यह हैं कि कविता की जो संवेदना होती है, काव्य की संवेदना का हृदयस्पर्शी जो आयाम होता हैं, उसका बोध पाठकों तक पहुँचना चाहिए। जिस तरह कवि श्रृंगार का, प्रेम का, भक्ति का, वात्सल्य का एक–एक कोना झांकता है और उस कोने की जो सूक्ष्म से सूक्ष्म अनुभूति है, उसको आत्मसात करके वह बड़े चित्रात्मक रूप में प्रस्तुत करता है।

सूर की जो सौन्दर्य दृष्टि हैं, वह इतनी अद्भूत और इतनी विलक्षण हैं कि न केवल मानवीय सौन्दर्य तक केन्द्रित रहें बल्कि राधा के, कृष्ण के रूप सौन्दर्य रूप वैभव को तो वो कई पदों के अलग–अलग तरह से चित्रित करते हैं। लेकिन प्रकृति का सौन्दर्य भावों का और विचारों का सौन्दर्य जो भ्रमरगीत प्रसंग के उद्धव और गोपियों के जो तर्क–वितर्क हैं उनके जो तार्किकता के भीतर निहित वैचारिक सौन्दर्य हैं, वह अद्भुत है। यहाँ सगुण और निर्गुण के द्वंद्व को उजागर करने और सगुण की निर्गुण पर विजय दिखाने का पूरा एक ताना–बाना सूरदास बुनते है, वह वास्तव में सूर की विलक्षण प्रतिभा का द्योतक बनकर हमारे सामने आते है।

कृष्ण भक्त कवि, कृष्ण काव्य परम्परा के प्रवर्तक कवि और अष्टछाप के शिरोमणि कवि सूरदास जिनका स्थान धर्म, साहित्य और संगीत के सन्दर्भ में अद्भुत है और रागाश्रित कविता के पद है उनके रागों पर आश्रित है और गेय पद हैं गीतत्व उनमें अद्भुत दृष्टि से दिखाई देता है। महान कवि का जो भाषाई क्षेत्र है, जो अभिव्यक्त कौशल का क्षेत्र है वह भी बड़ा व्यापक है और पूरे मध्य–युगीन काव्यधारा और कवियों में एक अलग स्थान प्राप्त करते हुए दिखाई देते हैं। इसलिए सूरदास को भक्ति काव्य के अग्रगण कवियों में माना जाता हैं। एक तरफ रामभक्ति शाखा में तुलसीदास अग्रगण्य है दूसरी तरफ कृष्ण भक्ति शाखा में सूरदास अग्रगण माने जाते हैं।

सूर वात्सल्य रस के सम्राट भी कहे जाते हैं। ऐसा वात्सल्य रस का अद्भुत, मार्मिक, हृदयस्पर्शी चित्रण बाल मनोविज्ञान की ऐसी सुन्दर कलात्मक सूक्ष्म अनुभूतियाँ और अभिव्यक्तियाँ ये अन्य किसी कवि में देखने को नहीं मिलती हैं। हालाकि बाल साहित्य पर लेखन की एक सशक्त परम्परा रही है लेकिन सम्रगतः अगर तुलना करें तो सूर का कोई सानी नहीं हैं। इस दृष्टि से हम देखें, विप्रलम्भ श्रृंगार जिसको हम विरह अनुभूति से जोड़कर देखते है विप्रलम्भ के दो पक्ष हैं संयोग और वियोग। जो वियोग है उसे विप्रलम्भ श्रृंगार शास्त्र में लिया गया। उस दृष्टि से भी हमें सूरदास बहुत ही मर्मस्पर्शी कवि प्रतीत होते हैं।

गोपियों के विरह के जो पद सूरदास ने लिखे हैं, प्रेम और विरह की अनुभूतियों को व्यक्त करने वाले जो पद सूरदास के हैं वे हिन्दी साहित्य की ही नहीं भारतीय वाङ्मय की अमूल्य धरोहर हैं। इस तरह ब्रजभाषा में एक साहित्यिक पहचान विशिष्ट रूप से बनाने वाला कोई महान कवि है तो वह सूरदास हैं।

सूरदास के स्वरचित ग्रंथों के आधार पर हम जब सूर के जन्म आदि, परिवार आदि, मृत्यु आदि के बारे में विचार करते है तो यह कह सकते है कि सूर का जन्म सन् 1478 ई. में दिल्ली के निकट सीही या रूनकता नामक ग्राम में हुआ था तथा ऐसा माना जाता है कि वे जन्मांघ थे। इसलिए जात–पात के बंधन से वो परे थे। और ऐसा भी कहा जाता हैं ''जाति–पाति पूछै नहीं कोई, हरि को भजै सो हरि को होइ'' इस बात को विशेष रूप से सूर अपनी कविता में अपनाते है। व्यक्ति की पहचान सूर की दृष्टि में उसकी जाति से, उसके पद से, उसके वंश से नहीं होती वह उसके कर्म से होती है और जो हरि का भक्त हैं, वह हरि का ही दास है इसलिए उसकी क्या जाति हैं वह तो भक्त हैं इस तरह से हम देखते हैं कि लगभग तीस–बत्तीस वर्ष की अवस्था में सूरदास बल्लभ सम्प्रदाय में दीक्षित हुए और जीवन के अन्तिम क्षण तक इसी वल्लभ सम्प्रदाय

की पुष्टिमार्गी भक्ति से जुड़े रहे। उनका देहावसान सन् 1583 ई. के लगभग पारसौली ग्राम में हुआ ऐसा विद्वानों का मानना हैं।

सूरदास की महत्वपूर्ण रचनाएँ अनेक हैं उनके लगभग पच्चीस ग्रंथों का उल्लेख प्राप्त होता है। सूर विषयक शोध के आधार पर ऐसा कहा जाता हैं कि उनके 25 ग्रन्थों का उल्लेख मिलता है। जिसमें सूरसरावली बहुत ही चर्चित रचना हैं। सूर–रामायण का भी उल्लेख मिलता हैं। भ्रमरगीत, सूरदास के विनय के पद, साहित्यलहरी, सूरपच्चीसी, सूरसागर, सूरसागर–सार संग्रह, सूर शतक ऐसी बहुत सारी रचनाएँ सूरदास की मिलती हैं। सूरसागर रचना अपने–आप में अद्वितीय हैं। सूरसागर की कीर्ति, यश इत्यादि का एक महत्वपूर्ण प्रमाण है। इस रचना को कृष्ण भक्ति काव्य का आधार स्तम्भ भी कहते हैं। सूरसागर भागवत के अनुसार और उसी की परम्परा को ध्यान में रखकर व उसका अनुकरण करते हुए रची गयी एक महत्वपूर्ण रचना है। जिसमें बार–बार सूर यह कहते भी है ''सूर कहौ भागवत–अनुसार''।

भागवत के अनुसार सूरदास ने सूरसागर की रचना की। भागवत का गहन अध्ययन सूरदास ने किया था और उसके प्रभाव स्वरूप इसकी रचना की। इस रचना के अन्तर्गत विनय के पदों का, दशावतारों का बहुत ही सुन्दर चित्रण किया हैं। कवि दृष्टि कृष्ण लीलाओं पर मुख्य रूप से अधिक केन्द्रित रही हैं। कृष्ण सूर के आराध्य हैं। और कृष्ण की अनेक लीलाएँ, गोपियों के साथ की लीला, कलियादमन लीला, यमुना में की गई क्रीड़ाएँ ऐसी तमाम तरह की लीलाओं पर सूर ने अपनी दृष्टि को केन्द्रित रखा हैं। कवि दृष्टि मुख्य रूप से रूप माधुर्य चित्रित करते हैं। प्रेम और विरह का सूरसागर में विशेष रूप से चित्रात्मक वर्णन सूरदास करते हैं। उद्धव गोपी संवाद, भ्रमरगीत प्रसंग इन सब में कृष्ण एक विशिष्ट लोकनायक के रूप में प्रस्तुत करते हुए सूरदास दिखाई देते हैं।

कृष्ण का लोकरक्षक रूप जो सूरसागर में है वह लोकनायक की तुलना में कम है यदि लोकरंजक की तरफ दृष्टि डाले तो वो सूरसागर में अधिक हैं। इसलिए लोकरक्षक के साथ–साथ लोकरंजक के रूप में कृष्ण सूरसागर में अधिक दिखाई देते हैं। सूरसागर के वस्तु परिदृश्य पर नजर डालें तो यह लीलापरक अधिक हैं। पुष्टिमार्ग के अनुसार सूर ने राधा को कृष्णलीला में मुख्य स्थान दिया हैं। इसका अर्थ है यह कि राधा वल्लभ सम्प्रदाय का प्रभाव सूरदास पर था और जो राधा हैं वह मुख्यत एक आद्यशक्ति के रूप में चित्रित हैं। इसलिए सूरदास ने भागवत का शब्दसः अनुवाद न करते हुए भी उसका प्रभाव जरूर ग्रहण किया। उस प्रभाव से जो सौन्दर्य सूरदास ग्रहण करते हैं उसको वो अपनी कलात्मक सूझ–बूझ से मौलिकता प्रदान करते हैं।

वात्सल्य, श्रृंगार ऐसे हृदयग्राही चित्र सूरदास अपनी रचना में उतारते है बालकृष्ण से कहलवाते हैं ''मैया कबहु बढ़ैगी चोटी। किती बेर मोहि दूध पियत भइ यह अजहूं है छोटी।।'' यह इसी प्रकार के अन्य बालमनोविज्ञान सुलभ प्रश्न जो वो अपनी माता से करते हैं, जो वो अपने मित्रों से करते हैं, जो वो अपने परिजनों से करते हैं उनका भी बहुत सुन्दर चित्रण यहाँ पर उतारा गया हैं।

सूर की रचनाओं में दो प्रकार की भक्ति देखी जाती है। एक विनय भाव की भक्ति दूसरी सख्य भाव की भक्ति। विनय भाव में भक्त ईश्वर की आराधना करता है और सख्य भाव में ईश्वर को अपना मित्र बना लेता है। पुष्टि मार्ग में दीक्षित होने से पहले सूरदास अपने आप को बहुत कमजोर व घिघियाता हुआ समझते थे। प्रभु को पतित पावन मानकर अपने उद्धार की प्रार्थना करते दिखाई पड़ते हैं। ''प्रभु हौं सब पतितन को टीकौ, और पतित सब दिवस चारि कै, हौ तौ जनमत ही कौ।''

इस तरह सूरदास सगुण भक्ति की जो भावना है, उसके माध्यम से जीवन के प्रथम चरण में निर्गुन ब्रह्म की महिमा का ज्ञान करते हुए दिखाई देते हैं।

'नैनन निरख श्याम स्वरूप रहो, घट–घट त्यापि सोइ ज्योति रूप अनूप'' वे माया का वर्णन ब्रह्म ज्ञानियों की शैली में करते हैं। पुष्टिमार्ग के सम्पर्क में आते ही निर्गुण के प्रति उदासीन और सगुण के प्रति समर्पित होते चले जाते हैं।

> ''रूप रेत गुन जात निरख बिन, निरालम्ब कित धावे।
> सव विधि अगम विचारहि ताते, सूर सगुन पद गावे।''

सूर कहते है सब दृष्टि से विचार करने के बाद मुझे ज्ञात हुआ कि सगुण भक्ति सबसे श्रेष्ठ है। सूर ने नवधा भक्ति के सभी रूपों का वर्णन अपनी कविता में किया है। किन्तु सर्वाधिक भक्ति भाव जो उन्हें प्रभावित करता हैं, यह सख्य भाव है, वात्सत्य भाव है, माधुर्य भाव है।

सूरसागर में बाल लीलाएँ बड़ी अद्भुत है। उच्चारण लीलाएँ, सुदामा की दरिद्रता का सख्य भाव के रूप का अतुल्य उदाहरण हमारे सामने आता है। सुदामा भले ही वर्षों से कृष्ण से न मिले हों लेकिन उनका सखा भाव कमजोर नहीं बल्कि मजबूत हुआ है। वात्सल्य भी भक्ति का एक हिस्सा है।

> ''सूर ने पुरुष होते हुए भी माता का हृदय पाया, यह कहना तो असंगत नहीं होगा।''

> ''वात्सल्य के क्षेत्र में जितना अधिक उद्घाटन सूर ने अपनी बंद आँखों से किया, इतना और किसी कवि ने नहीं किया। इन दोनों का तो वो कोना–कोना झांक आयें।''

इस तरह के तमाम कथन इस बात को प्रमाणिक करते हैं कि प्रेमाभक्ति, वात्सल्य भक्ति से विनय भक्ति इन सभी का ही लक्ष्य हैं–'आराध्य तक पहुँचना।'

माधुर्य भाव की भक्ति में भी सूरदास की गति अद्भुत है। इस तरह हम देख सकते हैं, भगवत् लीला–शक्ति परक हो, सौन्दर्य परक हो, भाव परक हो, विचार परक हो उन सबको सूरदास ने बहुत नजदीक से देखा है।

सूरदास ने गेय पदों की रचना बहुत सशक्त अभिव्यक्ति के माध्यम से की है वे हिन्दी कविता को बहुत समृद्ध और सम्पन्न बनाते हैं।

इस तरह सूरदास एक दिव्य दृष्टि वाले कवि हैं, ऐसा हम इनकी रचनाओं की विशेषता से समझ सकते हैं। इनकी रचनाओं ने समाज को एक सूत्र में बांधा तथा समाज के लोगों के अन्दर भक्ति के माध्यम से आत्मविश्वास पैदा किया।

सूरदास के काव्य में एक बहुत महत्वपूर्ण प्रसंग देखने को मिलता हैं, जिसकी चर्चा हिन्दी जगत में और भारतीय साहित्य में भरपूर होती है वह है सूर की भ्रमर–गीत योजना। जैसा कि हम जानते हैं कि मध्यकाल में भक्ति के युगीन विवाद में सगुण भक्ति और निर्गुण भक्ति के मध्य गहरा था, सगुण मार्गी धारा के अन्तर्गत हम देखते हैं कि कृष्ण मार्गी और राम मार्गी काव्यधारा और निर्गुण मार्ग में ज्ञानमार्गी और प्रेममार्गी ये दो धाराएँ मिलती है। ज्ञानमार्गी धारा संतों की काव्यधारा है और प्रेममागी धारा सूफियों की काव्यधारा है। तुलसी रामभक्ति काव्यधारा के प्रवर्तक हैं, सूर कृष्ण भक्ति काव्यधारा के प्रवर्तक हैं।

> ''भ्रमरगीत की योजना निर्गुण भक्ति काव्यधारा पर सगुण भक्ति काव्यधारा का विजय दिखाना है।''

मैनेजर पाण्डेय अपने ग्रन्थ में लिखते हैं कि – ''निर्गुण संतों की तरह सगुण भक्तों की कविता में सामंती समाज और उसकी विचारधारा के विरुद्ध ललकार की भाषा में उग्र विद्रोह घोषणाएँ कम है, लेकिन उनकी कविता में चरित्रों का निर्माण, कथा की संरचना, यथार्थबोध, भावबोध और जीवन के मूल्य के बोध के स्तर पर सामंती व्यवस्था और विचारधारा का विरोध प्रकट हुआ है। सूर और तुलसी ने कृष्ण और राम की जिन कथाओं को आधार बनाकर काव्य की रचना की, वे संस्कृत काव्य की उदात्त परम्परा की उपज

और लोकजीवन में प्रचलित कथाओं के नायक अन्याय और अत्याचार के विरुद्ध संघर्ष करने वाले वीर पुरुष है। सामंती समाज व्यवस्था के अन्याय और अत्याचार के विरुद्ध संघर्ष करने वाली जनता इन कथा–नायकों के संघर्ष में अपने संघर्ष की आकांक्षा का मूर्त रूप देखती है। यही इन कथाओं की व्यापक लोकप्रियता का रहस्य है। सूर और तुलसी के कृष्ण और राम अन्यायी, अत्याचारी और दमनकारी सत्ताओं के स्थान पर लोकहितकारी राजव्यवस्था की स्थापना करते है।''

जयदेव और विद्यापति ने कृष्ण–काव्य में गीति की जैसी प्रवाहमय धारा बहाई, उसका प्रभाव बाद के ब्रजभाषा में रचना करने वाले कृष्णश्रयी कवियों पर पड़ा। कृष्ण की जीवन लीलाओं से जुड़े कई काव्य लिखे गये। अष्ठछाप से इतर कई सम्प्रदाय हुए, जिन्होंने कृष्ण–काव्य की परम्परा को आगे बढ़ाया। कृष्ण–भक्ति को विकसित करने वाले सम्प्रदायों में शुद्धाद्वैतवाद, पुष्टिमार्ग, राधावल्लभ सम्प्रदाय, हरिदासी सम्प्रदाय, चैतन्य सम्प्रदाय के प्रमुख कवियों ने अपनी कविताई से इस परम्परा को समृद्ध किया। कृष्ण काव्य परम्परा में सूर का स्थान विशिष्ट है। सूर का वात्सल्य, बाललीला चित्रण और भ्रमरगीत भक्ति काव्य की उपलब्धि है। वियोग वर्णन में उनकी सहृदयता और वचन विदग्धता का चित्रण अद्वितीय है। सूर के काव्य में ब्रज की संस्कृति और समाज की सफल अभिव्यक्ति हुई है। गोचारण संस्कृति का चित्रण सूर के काव्य की विशिष्टता है। ब्रजभाषा का समस्त सृजनात्मक सौन्दर्य सूर के काव्य में समाहित हो गया है। सूरसागर एक श्रेष्ठ गीतिकाव्य भी है। सूर की कविता का भक्ति, रीति और आधुनिक काल के कवियों पर सहज प्रभाव ढूँढा जा सकता है। समाज को एक सूत्र में बांधने के लिए सूर का काव्य एक आशा की किरण के रूप में उस समय सामने आता है, जब समाज मुगल आक्रमणकारियों के दंश को झेल रहा था।

संदर्भ

1. हिन्दी साहित्य का इतिहास : आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, प्रयाग पुस्तक सदन, इलाहाबाद।
2. हिंदी साहित्य का भूमिका : हजारी प्रसाद हिंदी, हिन्दी–ग्रन्थ रत्नाकर कार्यालय, बम्बई।
3. हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास : रामस्वरूप चतुर्वेदी, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद।
4. भक्ति आन्दोलन और सूर का काव्य : मैनेजर पाण्डेय, वाणी प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली।
5. हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहास : डॉ. बच्चन सिंह, राधाकृष्णन प्रकाशन, दरियागंज, दिल्ली।
6. सूरदास : आचार्य रामचन्द्र शुक्ल।
7. सूरदास : विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, बह्मनाल, काशी।
8. महाकवि सूरदास : आचार्य नन्द दुलारे वाजपेयी, आत्माराम एंड सन्स, कश्मीरी गेट, दिल्ली।
9. सूर शतक : डॉ. मनमोहन गौतम, सूर्य प्रकाशन, नई सड़क, दिल्ली।
10. सूर के विशिष्ट पद : डॉ. किशोरी लाल, स्मृति प्रकाशन, इलाहाबाद।
11. सूरदास की वार्ता : प्रभु दयाल मीतल, अग्रवाल प्रेस, मथुरा।
12. सूर की काव्य–कला : मनमोहन गौतम, भारती साहित्य मन्दिर, दिल्ली।
13. भारतीय साधना और सूर–साहित्य : डॉ. मुंशीराम शर्मा, द्वितीय संस्करण।